International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

ढोकरा ढलाई तकनीकी और प्रक्रिया: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

देवानन्द गुप्ता

शोध छात्र, ललित कला एवं मंच कला विभागए दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर

संक्षिप्तिका (Abstract)

ढोकरा कला, जिसे ढोकरा कला, डोगरा कला, घड़वा कला आदि नामों से भी जाना जाता है, भारत मे कारीगरों द्वारा सदियों से प्रचलित एक पारंपरिक धातु ढलाई तकनीक है। यह कला एक प्राचीन परंपरावादी कला है। इसका संबंध सिंधु सभ्यता की मोहनजोदड़ो की नृत्य करती बालिका से है। यह एक भारतीय पद्धति है जो छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में प्रचलित हैं। यह कला पूरे भारत में अलग–अलग समुदायों में उनकी परंपरा और संस्कृति को दर्शाने के लिए जाना जाता है। इस अध्ययन में ढोकरा कला में प्रयुक्त सामग्रियों, उपकरणों और पद्धतियों का व्यापक विश्लेषण शामिल है, जिसमें उन स्वदेशी समुदायों पर ध्यान केंद्रित किया गया है, जिन्होंने इस विरासत शिल्प को संरक्षित किया है। इस पद्धति से मूर्तियां बनाने के लिए काफी समय और मेहनत की आवश्यकता पड़ती है। ढोकरा कला में किसी सांचे व मशीन का उपयोग नहीं किया जाता है, बल्कि इनका निर्माण कलाकार के हाथों के द्वारा ही किया जाता है। इस प्रकार प्रस्तुत शोध पत्र ढोकरा कला उत्पाद के विभिन्न चरणों पर प्रकाश डालता है, जिसमे पैटर्न बनाना, मोम से कलात्मक स्वरूप देना, धातु ढलाई और परिष्करण तकनीक शामिल है। आगे यह भारत के सांस्कृतिक संदर्भ में ढोकरा कला के महत्व और समकालीन कलात्मक अभिव्यक्तियों के लिए इसकी क्षमता की जांच करता है।

प्रमुख शब्द (Key Words): ढोकरा कला, मधुचिस्ट विधि, घरिया (क्रुसिबल), मोम से कलात्मक स्वरूप, धातु ढलाई।

प्रस्तावना

भारत एक ऐसा देश है जहाँ विभिन्न कलाओं एवं संस्कृतियों का समावेश देखने को मिलता है। ऐसी ही एक प्राचीन कला छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में प्रचलित है जिसे ढोकरा कला के नाम से जाना जाता है। यह कला एक प्राचीन परंपरावादी कला है, इसका संबंध सिंधु सभ्यता की मोहनजोदड़ो की नृत्य करती बालिका से है। यह एक भारतीय पद्धति है जो छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में प्रचलित हैं। इसमें मुख्यतः कांसा और पीतल को गलाकर ढलाई पद्धति से मूर्तियों का निर्माण किया जाता है। ढोकरा कला के कलाकार मध्यप्रदेश के बस्तर जिले के बचेली, दंतेवाड़ा, पटेलवाड़ा, गमवाड़ा आदि क्षेत्रों में निवास करते हैं। ढोकरा कला एक ढलाई पद्धति है, इस पद्धति को अलग–अलग स्थानों पर अलग–अलग नामों से जाना जाता है, जैसे ढोकरा कला, डोंगरा कला, गढ़वा कला, लास्ट वैक्स प्रॉसेस तथा मध्यप्रदेश के बैतूल जिले में भरेवा आर्ट के नाम से जाना जाता है। इस परंपरावादी कला का इतिहास 4000 साल पुराना है, इतिहासकारों के अनुसार ढोकरा कला हड़प्पा और मोहनजोदड़ो सभ्यता में भी बनाए जाते थे, जिसका साक्षात उदाहरण काँसे की नृत्यरत प्रतिमा है। ढोकरा कला का जन्म प्राचीन आदिवासी कलाकारों के द्वारा हुआ जो अस्थाई जीवन व्यतीत करते थे, जो पहाड़ों के आसपास पेड़ों के नीचे टोलियां बनाकर रहा करते थे। इन स्थानों पर इन घुमंतू जातियों के लिए आवश्यक परिवेश व पर्याप्त दीमक की मिट्टी, रेत, लकड़ी आदि सामग्रियों से भरपूर होने की वजह से एवं ग्राम के मुखिया के द्वारा संरक्षण दिए जाने पर उन्होंने स्थाई बस्तियों का निर्माण किया और स्थायी रूप से ढोकरा कला पद्धति में मूर्तियां बनाकर जीवन यापन करने लगे। आज वर्तमान समय में यह कला बस्तर जिले के कोंडागांव में विशेष रूप से प्रचलित है। यहाँ से मूर्तियां बनाकर विदेशों में भी भेजा जाता है। एक कहानी से ज्ञात होता है की ढोकरा कला झिटकु और मिटकी नामक प्रेमी युगल से संबंधित है, जो हीर–रांझा और लैला–मजनू की तरह एक प्रेमी जोड़ा था। इन कलाकारों एवं उनकी कलाकृतियों की वजह से छत्तीसगढ़ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी ख्याति प्राप्त कर चुका है। यह कला पूरे भारत में अलग–अलग समुदायों में उनकी परंपरा और संस्कृति को दर्शाने के लिए जाना जाता है। अतः यह प्रचलित प्राचीन कला है जो आज भी प्रचलित एवं प्रसिद्ध है। इस पद्धति से मूर्तियां बनाने के लिए काफी समय और मेहनत की आवश्यकता पड़ती है। ढोकरा कला में किसी सांचे व मशीन का उपयोग नहीं किया जाता है। इनका निर्माण कलाकार के हाथों के द्वारा ही किया जाता है। इनका मुख्य विषय आदिवासी आकृतियां है। इसी के साथ सांस्कृतिक, प्राकृतिक, धार्मिक तथा पौराणिक कथा एवं लोक कथाएं भी हैं तथा हाथी, घोड़ा, ऊंट, कछुआ, बृषभ, एवं खजूर के वृक्ष से लेकर रामायण महाभारत की आकृतियों को भी देखा जाता है जो लुप्त मोम विधि से बनाया जाता है। इस प्रकार, ढोकरा ढलाई तकनीक से अद्वितीय और सुंदर धातु कलाकृतियाँ बनती हैं, जो आज भी कलाकारों और कला प्रेमियों को मोहित करती हैं। कुछ समकालीन कलाकर जैसे मीरा मुखर्जी इस मूर्ति शिल्प से विशेष रूप से प्रभावित हैं जो अपने मूर्तिशिल्पों में माध्यम के रूप में प्रयोग करती हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

इस शोधपत्र के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1 ढोकरा कला के तकनीकी और प्रक्रियात्मक पहलुओं का अध्ययन करना।

2. इस अद्वितीय धातु की मूर्तियों को बनाने में शामिल जटिल प्रक्रियाओं पर प्रकाश डालना।

3. सांस्कृतिक सन्दर्भ में ढोकरा कला के महत्व को रेखांकित करना।

शोध प्रविधि

इस शोधपत्र को पूर्ण करने के लिए ऐतिहासिक, क्रियात्मक, वर्णनात्मक और सर्वेक्षणात्मक विधि का प्रयोग किया गया है। साक्षात्कार एवं सर्वेक्षण से प्राप्त समंकों के अतिरिक्त इसमे द्वितीयक समंको का भी प्रयोग किया गया है। द्वितीयक समंको के संकलन हेतु संबंधित शोध ग्रंथो, पुस्तकों, कार्यशालाओं, पत्र–पत्रिकाओं, वेबसाइट्स तथा इंटरनेट आदि का सहयोग लिया गया है।

ढोकरा शिल्प सामाग्री

ढोकरा कला में मेटल, मोम, मिट्टी, जली हुई मिट्टी, रेत वाली मिट्टी, लोह मिट्टी से बनी घरिया (क्रुसिबल–जिसमें मेटल को रखकर पिघलाया जाता है), मोम से धागा बनाने वाली मशीन तथा लकड़ी के बने कुछ टूल्स आदि सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। धातु पिघलाने के लिए लकड़ी, कोयला, तथा गोबर के उपले का उपयोग किया जाता है। साथ ही ईंट का प्रयोग भी भट्ठी बनाने के लिए किया जाता है। इन सामग्रियों का प्रयोग करके ढोकरा शिल्प का स्वरूप दिया जाता है।

ढोकरा कला ढलाई तकनीकी

यह शिल्प लास्ट वैक्स तकनीकी (मोम क्षय विधि) और धातु शोधन का संयोजन है। इस पद्धति में ढोकरा कला ढलाई विशेष रूप से तीन प्रमुख चरणों में की जाती है– ढांचा बनाना, मोम से सजावटी नक्कासी और पालिश करना। इस पद्धति में साँचे का उपयोग केवल और केवल एक ही बार किया जाता है और निर्माण के बाद तोड़ दिया जाता है जिससे यह कला दुनिया में अद्वितीय अर्थात अपनी तरह की एकमात्र कला बन जाती है।

मोम से धागा बनाने की विधि

एक किलो शुद्ध मधुमक्खी वाली मोम बनाने के लिए एक लोहे के पात्र में पहले राल (लोहबान) 200–250 ग्राम अच्छी तरह गलाया जाता है। पूरी तरह से गलने के बाद उसमें एक किलो मोम मिलाया जाता है। उसके बाद उसमें मोम को और अधिक मात्रा में बढ़ाने के लिए 250 ग्राम मोमबत्ती वाली मोम (सफेद मोम) मिलाया जाता है। मोम की और अधिक मात्रा बढ़ाने के लिए 100 ग्राम या 150 ग्राम डामर मिलाया जा सकता है तथा कुछ मात्रा में तेल मिलाते हैं लगभग 150 ग्राम। फिर गर्म करके तरल बनाया जाता है और उसके बाद पानी से भरे टप में सूती कपड़े के माध्यम से छान लिया जाता है और उसी टप में कुछ समय तक ठंडा होने दिया जाता है। फिर उसे पानी से बाहर निकाल कर हल्का गर्म किया जाता है। उसके बाद हाथों में हल्का तेल लगाकर मोम को अच्छे से गूंथा जाता है और एक सेवँई बनाने वाली मशीन या उसके जैसा कोई भी मशीन जिससे सेवँई की तरह मोम का धागा निकाला जा सके उससे मोम के धागे बना लिए जाते हैं।

भट्ठी बनाने की विधि

भट्ठी बनाने के लिए सर्वप्रथम एक ड्रम लेते हैं और उसमें नीचे से 10 या 15 सरिया की जाली बनाते है। फिर बाहर से और अंदर से मिट्टी के गारे से ईंट की जोड़ाई कर देते है। इसके बाद लकड़ी, कोयला या गोबर के उपले को भट्ठी में रखने के बाद उसी भट्ठी में घरिया (क्रुसिबल) में धातु भर के रख दिया जाता है और उस भट्ठी में आग जला दिया जाता है। अब धातु गलने तक दूसरी भट्ठी में मॉडल को भी पकाया जाता है। इसके बाद सँडसी से मॉडल निकाल कर धातु का तरल गोल चाडी के रास्ते डाल दिया जाता है। इस तरल को उठाने के लिए स्टील की कटोरी को कुछ समय तक गर्म करके सँडसी से पकड़कर धातु का तरल निकाला जाता है और मॉडल में डाल दिया जाता है।

ढोकरा कला बनाने की प्रक्रिया

सर्वप्रथम भूरी चिकनी मिट्टी में भूसा और पानी मिलाकर गूंथा जाता है फिर इस गुंथी हुई मिट्टी से मूर्ति का आकार (मॉडल) तैयार किया जाता है। अब उस मॉडल के ऊपर मोम का एक पतला परत लगाया जाता है उसके बाद मोम के धागे को राउंड राउंड करके लपेटा जाता है। फिर लकड़ी के टूल्स के माध्यम से हल्का दबाते हुए प्लेन कर लिया जाता है। इसके बाद मोम के धागे से ही मॉडल के ऊपर मनचाहा डिजाइन तैयार किया जाता है। अब इस डिजाइन के ऊपर भूरी मिट्टी और जली हुई मिट्टी को मिलाकर सूखे में ही पीसने के बाद चाल लिया जाता हैं और उसमें पानी मिलाकर गीला करते हुए मॉडल के ऊपर मोटा लेप हलका दबाते हुए लगाया

जाता हैं ताकि मिट्टी पूरी तरह से डिजाइन को कवर कर ले। मॉडल के निचले हिस्से में थोड़ा जगह छोड़ दिया जाता है। वहाँ मिट्टी का लेप नही लगाया जाता है। फिर अच्छे से सूखने के बाद बिना मिट्टी के लेप वाली जगह से चौनल लगा लिया जाता है जो मोम का ही बना होता है। फिर भूरी मिट्टी में भूसा पानी मिलाकर गूँथी गई मिट्टी से मोम के डिजाइन के ऊपर लगभग आधा इंच मोटा एक परत लगाया जाता है। जिस जगह से चेनल निकली हुई होती है उस जगह पर मिट्टी का ही गोल कुप्पी नुमा चाड़ी बनाया जाता है और इसे सूखने के लिए रख दिया जाता है। सूखने के बाद तीन या चार पतली कील ठोक दी जाती है ताकि मोम जब पिघलकर बाहर निकल जाए तो मोम के नीचे वाले मिट्टी का मॉडल और मोम के ऊपर वाली मिट्टी की परत आपस में सटने न पाए जिससे तरल धातु को भरने के लिए जगह बनी रहे। फिर एक तरफ भट्टी में इसे पकाया जाता है और दूसरी तरफ धातु को लोहमिट्टी की बनी घरिया (क्रुसिबल) में रख कर गलाया जाता है। मॉडल में गोल लगी चाड़ी को भट्टी में नीचे की ओर रख कर पकाया जाता है ताकि मोम पिघलकर बाहर निकल जाए। पकने के बाद उसे एक सँडसी की सहायता से मॉडल को बाहर निकाल लिया जाता है और तुरंत लगी गोल चाड़ी के रास्ते तरल धातु को डाल दिया जाता है। अब उसे ठण्डा होने के लिये छोड़ दिया जाता है। लगभग 20 मिनट के बाद हल्का पानी डाल–डाल कर धीरे धीरे ठंडा किया जाता है। हल्का गर्म रहते ही मिट्टी का लेप तोड़ दिया जाता है और मूर्ति तैयार हो जाती है। फिर ब्रश और रेती के द्वरा साफ कर लिया जाता है। इसके बाद चाहे तो पॉलिस या कलर भी कर सकते हैं।

सांस्कृतिक संदर्भ में ढोकरा कला का महत्व

ढोकरा कला भारतीय संस्कृति से जुड़ी एक जनजातीय लोक कला है जो भारत में लोकप्रिय मूर्तिकला परंपराओं में महत्त्व रखता है। ढोकरा कला या लुप्त मोम विधि या सियरे पर्ड्यू तकनीक से बनी धातु की मूर्तियां बस्तर छत्तीसगढ़ मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों, ओडिशा, पश्चिम बंगाल के मिदनापुर में प्रचलित प्रमुख धातु शिल्पों में से एक है। इनमें लुप्त मोम विधि के माध्यम से तांबा, पीतल, तथा कांस्य धातुओं की ढलाई शामिल हैं। यह कला मुख्य रूप से छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले में विख्यात है जो भारतीय कला एवं शिल्प के विभिन्न पहलुओं में एक अद्भुत और महत्वपूर्ण स्थान रखती है। ढोकरा कला छत्तीसगढ़ की स्थानीय, सांस्कृतिक परंपराओं और धरोहरों का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके माध्यम से स्थानीय कला और शैली को संरक्षित किया गया है और इससे आने वाली पीढ़ियों को साझा करने का अवसर मिलता है। ढोकरा कला छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक है और इसके लिए इसे महत्वपूर्ण रूप से सम्मानित भी किया जाता है। इसके माध्यम से राज्य के सांस्कृतिक धरोहर की सुरक्षा और संरक्षण किया जाता है और साथ ही रोजगार के अवसर भी प्रदान किए जाते हैं।

छत्तीसगढ़ एक राज्य है जो भारत के मध्य–पूर्वी क्षेत्र में स्थित है। यहां की संस्कृति बहुत विविधता और समृद्धि से भरी हुई है और ढोकरा कला इस समृद्धि और सांस्कृतिक विरासत का महत्वपूर्ण हिस्सा है। ढोकरा कला के माध्यम से यहां की स्थानीय जनजातीय संस्कृति को प्रदर्शित किया जाता है। ढोकरा कला एक प्राचीन तकनीकी कला है जो धातु के उच्च गुणवत्ता वाले उत्पादन को बनाने के लिए जानी जाती है। इस कला के अंतर्गत धातु से निर्मित आकर्षक वस्तुएं बनाई जाती हैं। यह कला छत्तीसगढ़ के धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व को प्रकट करती है, क्योंकि इसके माध्यम से स्थानीय धार्मिक पूजा–पाठ और परंपराएं भी जीवंत रहती हैं। ढोकरा कला के उत्पाद छत्तीसगढ़ के शिल्पकारों के लिए भी आर्थिक स्रोत हैं। यह कला उन्हें अपनी प्रतिभा को साझा करने और उत्कृष्ट कौशल का प्रदर्शन करने का मौका प्रदान करती है।

सांस्कृतिक रूप से ढोकरा कला छत्तीसगढ़ के परंपरागत आभूषण, मूर्तियाँ, पूजा पाठ की सामग्री, झालरों आदि का निर्माण करती है, जिन्हें स्थानीय त्योहारों, पर्वों और समारोहों में उपयोग किया जाता है। इसे स्थानीय समुदाय के एकता और सांस्कृतिक गौरव का प्रतीक माना जाता है।

छत्तीसगढ़ में ढोकरा कला के उत्पाद की मांग भी पर्यटकों को आकर्षित करती है। देश–विदेश से आने वाले पर्यटक यहां स्थानीय कलाकारों द्वारा निर्मित उत्पादों की खरीदारी करने के लिए उत्सुक होते हैं। जिससे इस कला के स्थानीय अर्थतंत्र को भी बढ़ावा मिलता है। समर्थन और प्रशासनिक सहायता के साथ, ढोकरा कला छत्तीसगढ़ के सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और समृद्धि का कारण बनती है। इसलिए, छत्तीसगढ़ में ढोकरा कला को सांस्कृतिक रूप से विशेष महत्व दिया जाता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि ढोकरा कला छत्तीसगढ की स्थानीय संस्कृति का एक प्रमुख हिस्सा है। इससे सम्बन्धित शिल्प सामग्री, ढलाई तकनीकी, तथा मोम से धागा बनाने की विधि एवं इस धागे से मॉडल के ऊपर खूबसूरती से डिजाइन तैयार करने, भटठी बनाने तथा ढोकरा ढलाई प्रक्रिया के अध्ययन से ज्ञात होता है कि सांस्कृतिक सन्दर्भ में ढोकरा कला का विशेष महत्व है तथा यह मूर्तिशिल्प जनजातियों द्वारा विकसित पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाली प्राचीन कला है। जिससे यह ज्ञात हो सका है कि ढोकरा कला छत्तीसगढ़ की स्थानीय सांस्कृतिक परम्पराओ और धरोहरों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है तथा इस कला का संबंध आध ऐतिहासिक काल से रहा है।
इस अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ है कि छत्तीसगढ़ की ढोकरा मूर्तिशिल्प अन्य मूर्तिशिल्पों से विशेष रूप से भिन्न है। इस पद्धति में साँचे का उपयोग केवल और केवल एक ही बार किया जाता है और निर्माण के बाद तोड़ दिया जाता है जिससे यह कला दुनिया में अपनी

तरह की एकमात्र कला बन जाती है। यह शोधपत्र अध्ययन ढोकरा कला के गहरी समझ में योगदान तथा इस प्राचीन शिल्प रूप की खोज में रुचि रखने वाले विद्वानों, कलाकारों और उत्साही लोगों के लिए एक मूल्यवान संसाधन के रूप में काम करेगा। ढोकरा कला द्वारा निर्मित मूर्तियां अपनी अद्वितीय विशिष्टता के कारण पर्यटकों तथा विशिष्टजनों में अत्यंत ही लोकप्रिय है। ढोकरा कला को स्थानीय स्तर पर प्रोत्साहित करके, प्रशिक्षण प्रोग्राम और कला मेलों का आयोजन करके, रोजगार में वृद्धि की जा सकती है। स्थानीय उद्यमिता का समर्थन करने और विशेषज्ञता विकसित करने के लिए सरकारी सहायता भी लाभकारी साबित हो सकती है। इसके साथ ही, इंटरनेट और ई–कॉमर्स के उपयोग से ढोकरा कला को विश्वव्यापी बाजार में प्रस्तुत करने का अवसर भी हो सकता है। इस प्रकार यदि इस कला को सरकारी संरक्षण, प्रशिक्षण एवं सुविधाएं प्रदान की जाए तथा इसका उत्पादन औद्योगिक स्तर पर किया जाए तो यह कला आर्थिक विकास तथा विदेशी मुद्रा अर्जन के साथ–साथ आय एवं रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. निरंजन, महावर (2014), "छत्तीसगढ़ की शिल्प कला'' प्रकाशक– राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
2. Artisan Soul- https://www.artisansoul.in
3. HiSoUR- https://www.hisour.com
4. wikipedia- https://en.wikipedia.org
5. प्रो0 राजेश कोचरी, "ढोकरा धुतु ढलाई की पारंपरिक कला,, https://chitralekha.com
6. "छत्तीसगढ़ की शिल्प कला,, छत्तीसगढ़ ज्ञान (Blog), छत्तीसगढ़ राज्य अलंकरण, 2021, https://www.chhattisgarhgyan.in